Shikshan Sanshodhan : Journal of Arts, Humanities and Social Sciences ISSN(o): 2581-6241
Monthly, Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal Impact Factor: 7.384
Volume - 7, Issue - 9, September - 2024

DOIs:10.2018/SS/202409003 --:-- Research Paper / Article / Review

गोस्वामी तुलसीदास की समन्वय दृष्टि का विश्लेषण

अंशु शेखर
शोधार्थी, हिंदी विभाग, पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय, पटना - 800020
ई. मेल- anshushekhar15@gmail.com

शोध सार: समन्यवाद भारतीय संस्कृति की एक अद्वितीय विशेषता है। यदि हम इतिहास की ओर दृष्टिपात करें तो स्पष्टतः पायेंगे कि इस देश में समय-समय पर अनेक संस्कृतियों का आगमन और आविर्भाव हुआ, परंतु वे सब आपस में घुल-मिल कर एक हो गयीं। न जाने कितनी ही दार्शनिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक, साहित्यिक और सौन्दर्यमूलक विचारधाराओं का विकास हुआ, किंतु उनकी परिणति संगम के रूप में हुई। इन अर्थों में यदि देखा जाए तो महाकवि गोस्वामी तुलसीदास महान समन्यवादी दिखाई देते हैं। अपने समन्वयवादी दृष्टिकोण से ही वे सच्चे लोकनायक बने। उनका 'रामचरितमानस' ग्रंथ इस दृष्टि से अद्वितीय ठहरता है। उन्होंने धर्म, समाज, राजनीति, साहित्य सभी स्तरों पर अपने समन्वयवादी दृष्टिकोण का परिचय दिया है। इसी समन्वयकारी दृष्टिकोण के विभिन्न आयामों को प्रस्तुत करना इस शोध आलेख का अभीष्ट है।

बीज शब्द: शैव-वैष्णव-शाक्त, निर्गुण - सगुण, ज्ञान-भक्ति-कर्म, शील, शक्ति व सौंदर्य की पराकाष्ठा रूपी राम, परिवार एवं समाज, अवधी व ब्रज भाषा, लोकमत एवं वेदमत, समन्वयवादी दृष्टिकोण, समाज सुधारक, तत्त्वद्रष्टा, दार्शनिक एवं लोकनायक के रूप में तुलसीदास ।

1. मूल आलेख: तुलसीदास के समय में शैव, शाक्त और वैष्णवों में परस्पर वैमनस्य और विद्वेष की भावना अपने चरम सीमा पर थी। तुलसी ने इन सभी में समन्वय स्थापित कर इनकी पारस्परिक दुर्भावना को दूर करने का प्रयास किया। उन्होंने एक ओर तो रामचरितमानस के बालकांड में भगवान शिव के मुख से 'सोई मम इष्ट देव रघुवीरा' कहलवाकर उन्हें रामोपासक सिद्ध किया, वहीं दूसरी ओर सेतु- निर्माण के अवसर पर राम द्वारा शिव की प्रतिष्ठा एवं पूजा अर्चना करवाकर राम को शिव का अनन्य भक्त सिद्ध किया। विनयपत्रिका में विष्णु और शिव की साथ- साथ स्तुति की गयी। रामचरितमानस में शाक्त और वैष्णव मतों का भी समन्वय है। सीता को उन्होंने ब्रहम की शक्ति बतलाया है तो शाक्त मत में वर्णित शक्ति को राम की प्रिया कहकर दोनों मतों में समन्वय स्थापित करने का सफल प्रयास भी किया है।

संत तुलसीदास के पूर्ववर्ती भक्तों में ब्रहम के निर्गुण और सगुण स्वरूप पर पर्याप्त संघर्ष चला आ रहा था। शंकर के निर्गुण ब्रह्मवाद के विरोध में वल्लभ और रामानुज ने ब्रहम का सगुण रूप स्थापित किया था। इसी संघर्ष के परिणामस्वरूप सूरदास ने अपने भ्रमरगीत में ब्रहम के निर्गुण रूप का खंडन कर सगुण की महत्ता का प्रतिपादन किया था। परंतु तुलसी ने इन दोनों में समन्वय स्थापित कर इस विरोध को दूर करने का सफल प्रयास किया। उन्होंने बार- बार दोनों में अभेद की घोषणा की, उदाहरणस्वरूप-

अगुनहि सगुनहि नहिं कछु भेदा ।

गावहि बुध पुराण मुनि बेदा ।।

जय राम रूप अनूप निर्गुन- सगुन गुन प्रेरक सही।

अगुन सगुन दुइ ब्रह्म सरूपा ।

अकथ अगाध अनादि अनूपा ।।

तुलसी के युग में ज्ञानियों एवं भक्तों में भी परस्पर तीव्र संघर्ष चल रहा था। तुलसी कर्म, ज्ञान और भक्ति तीनों के संबंध में ही जीवन की पूर्णता स्वीकार करते हैं। उन्होंने यद्यपि 'ग्यान के पंथ कृपान की धारा' आदि कहकर ज्ञानमार्ग की कठिनाइयों की ओर संकेत किया है। इसके अतिरिक्त रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदास ने स्वयं श्री राम के मुख से नारद - राम संवाद के अंतर्गत निम्नलिखित पंक्तियाँ कहलवायीं हैं। जो कि यह बतलाता है कि ज्ञानीजन ज्ञान प्राप्त कर लेने के उपरांत भी भक्ति का त्याग नहीं करते क्योंकि भक्तों के पास ईश्वर का बल रहता है और ईश्वरीय बल होने के कारण भक्तों के शत्रुओं का विनाश करने का दारमदार ईश्वर पर ही रहता है :-

सुनि मुनि तोहि कहउँ सहरोसा। भजहिं जे मोहि तजि सकल भरोसा ।।

करउँ सदा तिन्ह कै रखवारी । जिमि बालकहि राखइ महतारी।।

गह सिसु बच्छ अनल अहि धाई । तहँ राखइ जननी अरगाइ।।

प्रौढ़ भए तेहि सुत पर माता। प्रीति करइ नहिं पाछिलि बाता।।

मोरे प्रौढ़ तनय सम ग्यानी। बालक सुत सम दास अमानी । ।

जानहिं मोर बल निज बल ताही। दुहु कहुँ काम क्रोध रिपु आही ।।

यह बिचारि पंडित मोहि भजहीं। पाएहुँ ग्यान भगति नहिं तजहीं ॥

इसके साथ ही साथ ''भक्ति सुतंत्र सकल सुख खानी'' कहकर भक्ति को ज्ञान की अपेक्षा श्रेष्ठ सिद्ध किया है, फिर भी उन्होंने ''भगतिहि ग्यानहि नहि कछु भेदा, उभय हरहिं भव संभव खेदा'' कहकर दोनों में समता स्थापित किया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने इसमें कर्म को समन्वित करते हुए कहा है-

जोग अगिनि करि प्रकट तब कर्म सुभासुभ लाइ ।

बुद्धि सिरानै ज्ञान घृत ममता मल जरि जाइ ।।

'विनयपत्रिका' में भी तुलसी ने स्पष्ट कहा है कि ज्ञान - भक्ति से रहित कर्म मल जनक और बंधन कारक होता है। इस प्रकार तुलसी ने समाज व्यवस्था तथा जीवन की पूर्णता को ध्यान में रखकर तीनों के समन्वय पर बल दिया है।

शील, शक्ति और सौंदर्य ये तीन मनुष्य जीवन की ऐसी विभूतियाँ हैं जिनसे वह पूर्णता प्राप्त करता है। शील के बिना जीवन नीरस, घृणास्पद और कटु हो जाता है, शक्ति के बिना वह दुर्बल, अशक्त और पंगु बन जाता है तथा सौंदर्य के बिना वह अनाकर्षक हो जाता है। तुलसी के आदर्श नायक लोकरक्षक राम में इन तीनों विभूतियों का अद्‌भुत समन्वय है। इन्हीं तीनों विभूतियों के आधार पर वे एक मर्यादावादी लोकनायक बनते हैं। तुलसी के राम, सूर के कृष्ण के समान केवल सौंदर्य की ही मूर्ति नहीं है, अपितु तीनों पक्षों की पराकाष्ठा हैं। 'मानस' में राम का यही स्वरूप उद्‌घाटित हुआ है। 'विनयपत्रिका' में जहाँ राम के शील निरूपण को ही अधिक प्रधानता दी गयी है, वहीं 'कवितावली' में शक्ति निरूपण तथा गीतावली में सौंदर्य निरुपण की अभिव्यक्ति हुई है।

तुलसी ने व्यक्ति परिवार एवं समाज स्तर पर भी अपनी समन्वयात्मक दृष्टि का परिचय दिया है। तुलसीदास ने भक्ति के क्षेत्र में ब्राह्मण और शुद्र को एक ही स्थान पर प्रतिष्ठित किया है। क्षत्रिय श्रेष्ठ भरत और ब्राहमण रत्न वशिष्ठ ने निम्नवर्गीय निषाद तथा केवट को आत्मविस्मृत होकर प्रेमपूर्वक गले लगाया -

भेंटत भरतु ताहि अति प्रीति । लोग सिहाहिं प्रेम कै रीती ॥

तेहि भरि अंक राम लघु भ्राता । मिलत पुलक परिपूरित गाता।।

प्रेम पुलकि केवट कहि नामू । कीन्ह दूरि तें दण्ड प्रनाम ।।

रामसखा रिषि बरबस भेंटा। जनु महि लुटत सनेह समेटा ॥

तुलसीदास ने परिवार के स्तर पर पिता-पुत्र, पति-पत्नी, भाई-भाई, स्वामी - सेवक आदि में समन्वय स्थापित किया है। तुलसी ने दशरथ, कौशल्या, राम, लक्ष्मण भरत, सीता आदि के माध्यम से भारतीय पारिवारिक जीवन का एक महान आदर्श प्रस्तुत किया है। 'मानस' के विभिन्न पात्रों का पारस्परिक संबंध निःसंदेह स्नेह और शील की उदात्त भूमि पर प्रतिष्ठित है।

तुलसी ने साहित्य के क्षेत्र में भी अद्‌भुत समन्वय की स्थापना की है। उन्होंने अपने काव्य ग्रंथों की रचना उस काल के दोनों प्रमुख काव्य भाषा ब्रज एवं अवधी में की है। रामचरितमानस के प्रारंभ में संस्कृत श्लोकों को प्रस्तुत कर हिंदी एवं संस्कृत का सुंदर समन्वय किया। इसी प्रकार उन्होंने अपने समय की सभी प्रचलित काव्यशैलियों को अपनाया। चन्द के छप्पय, कबीर के दोहे, विद्यापति और सूर की गीत- पद्धति, जायसी की दोहा - चौपाई पद्धति, रहीम के बरवै पद्धति आदि को अपनाया। लोक साहित्य के प्रति मन में स्नेह भाव होने के कारण उन्होंने जनता में प्रचलित सोहर, नहछू गीत, चाचर, बेली, बसंत आदि रागों में राम कथा लिखी ।

चित्रकूट में भरत - राम मिलन के अवसर पर होने वाली सभा में तुलसी ने भरत के वचनों द्वारा साधुमत, लोकमत, राजनीति एवं वेदमत के मध्य सुंदर समन्वय प्रस्तुत किया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार - "साधुमत का

अनुसरण व्यक्तिगत साधन है, लोकमत, लोकशासन के लिए है। इन दोनों का सामंजस्य तुलसी की धर्म भावना के भीतर है।" तुलसीदास युगस्रष्टा के साथ - साथ युगद्रष्टा भी थे। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार - "लोकनायक वही हो सकता है जो समन्वय कर सके, क्योंकि भारतीय जनता में नाना प्रकार की परस्पर विरोधिनी संस्कृतियाँ, साधनाएँ, जातियाँ, आचारनिष्ठा और विचार पद्धतियाँ प्रचलित हैं। बुद्धदेव समन्वयकारी थे। गीता में समन्वय की चेष्टा है और तुलसीदास भी समन्वयकारी थे।"

2. निष्कर्ष: निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि गोस्वामी तुलसीदास उच्च कोटि के कवि होने के साथ ही साथ समाज सुधारक, तत्त्वद्रष्टा एवं दार्शनिक भी थे। वे उस युग की उपज थे जिसमें अनेक धार्मिक एवं दार्शनिक संप्रदाय प्रचलित थें। सभी में परस्पर विरोध था। तुलसी ने इन सभी में समन्वय स्थापित करके अपना एक निश्चित दार्शनिक मत स्थापित किया। तुलसी ने विविध आदर्शों की स्थापना कर तथा विभिन्न क्षेत्रों में समन्वय की प्रतिष्ठा कर एक सच्चे लोकनायक का कार्य निष्पादित किया है। उनकी संतुलित प्रतिभा ने मानव समाज को ऐसा महान साहित्य दिया जो इतिहास में अपना प्रतिद्वंदी नहीं रखता। अंत में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में कह सकते हैं कि "तुलसीदास कवि थे, भक्त थे, पंडित, सुधारक थे। इन रूपों में उनका कोई भी रूप घटकर नहीं था। यही कारण है कि उन्होंने सब ओर से समता की रक्षा करते हुए एक अद्वितीय काव्य की सृष्टि की जो अब तक उत्तर भारत का मार्गदर्शक रहा है और उस दिन भी रहेगा, जिस दिन नवीन भारत का जन्म हो गया होगा ।"

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. हिंदी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, भक्ति काव्यधारा (कबीर, जायसी, सूरदास, तुलसीदास) , विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, संस्करण- प्रथम संस्करण 2010 ई० , पृष्ठ संख्या -128, 129...136

2. भगवदाचार्य, डॉ० स्वामी , तुलसीदास : एक प्रामाणिक सर्वेक्षण, सनातन धर्म परिषद, लखनऊ, प्रथम संस्करण - 2012, पृष्ठ संख्या - 151, 152, 163 -165, 178, 180, 181, 210 - 214

3. गुप्ता, डॉ० शीलवती, तुलसी साहित्य में राजनीतिक विचार, साहित्य प्रकाशन, प्रथम संस्करण - 1977, पृष्ठ संख्या 89, 90, 92, 111, 113, 114, 161,163, 231- 233

4. मिश्र, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद, तुलसी की साधना - लोक भारती प्रकाशन, संस्करण - प्रथम 1978, पृष्ठ संख्या - 46,47, 58, 59, 91, 92,95

5. पोद्दार , हनुमान प्रसाद, तुलसीदास विरचित श्रीरामचरितमानस गीताप्रेस , गोरखपुर -273005 , संस्करण - संवत् 2068 , पृष्ठ सं. – 659-660